विष्णु प्रभाकर के कथा साहित्य में नारी विमर्श

डॉ. बीना चौधरी

युगीन संदर्भों में जीवन–मूल्यों की सहज स्वीकृति के साथ नारी जीवन के विविध पक्षों की यथार्थ अभिव्यक्ति ही नारी विमर्श है। महानगरीय जिंदगी और आर्थिक दबावों के बीच उभरते नये मूल्यों के संदर्भ में जूझती नारी आज के साहित्यकारों के लिये बड़ी चुनौती है। आधुनिककालीन जागृत चेतना ने समाज व साहित्यकारों को नारी विमर्श हेतु मजबूर किया है। हिन्दी कथा–साहित्य के प्रारंभिक काल से ही किसी न किसी रूप में नारी विमर्श दिखाई पड़ता है। 1950 के पश्चात् के कथा साहित्य में तो नारी विमर्श पर बहुत लिखा गया है। नई पीढ़ी के कथाकार जो आज भी सक्रिय हैं, ने अपने – अपने दृष्टिकोण से इस संदर्भ में कलम चलाई है, किन्तु पुरानी पीढ़ी के कथाकारों ने भी इस दिशा में अपनी लेखनी चलाई है। 1950 के पश्चात् के पुरानी पीढ़ी के रचनाकार श्री विष्णु प्रभाकर के कथा–साहित्य में नारी विमर्श गहन चेतना के साथ विद्यमान है। डॉ. नीरजा टण्डन की स्त्री विमर्श के संदर्भ में यह उक्ति कि स्त्री विमर्श के केन्द्र में है नारी की अस्मिता की तलाश[1] विष्णु प्रभाकर के कथा साहित्य में निहित नारी विमर्श पर सटीक सिद्ध होती है।

विवेकसिंह ने महिला लेखिकाओं के स्त्राी विमर्श को मुक्ति का मार्ग खोजती हुई आधुनिक स्त्री के जीवन के विविध पहलुओं का अंकन करना बताया है – चाहे वह यौन, संबंधों को लेकर देह शुचिता का प्रश्न हो या फिर अपने व्यक्तित्व की स्वतंत्रा सत्ता स्थापित करने की छटपटाहट पुरूष की हवस का शिकार होती हुई आधुनिक स्त्री का प्रतिक्रियावादी आक्रोश हो या फिर दंभी स्वेच्छाचारी पति से संबंध विच्छेद का प्रश्न हो। महिला कथा–लेखन स्त्री के इन समस्त संघर्षों को वाणी दे रहा है[2] विवेकसिंह के महिला कथाकारों के लिये कहे गए ये शब्द विष्णु प्रभाकर के कथा साहित्य में भी अपनी गहन चेतना के साथ विद्यमान हैं।

उनके कथा – साहित्य में नारी विविध रूपों में चित्रित है – कहीं वह पुरूष की प्रेरणा है, तो कहीं पुरूष द्वारा प्रताड़ित, कहीं प्रेम की साकार प्रतिमा है, तो कहीं अस्तित्व की तलाश में भटकती मुक्ति की आकांक्षीय कहीं सरल प्राण गृहिणी है, तो कहीं विद्रोही व्यक्तित्व की स्वामिनी और कहीं मानवता की प्रतिमूर्ति। इन सबके केन्द्र में है विष्णुजी का नारी के प्रति दृष्टिकोण, उनका अपना विमर्श। वे नारी को केवल रति नहीं अनुसूया भी मानकर उसकी महत्ता स्वीकार करते हैं।[3] उनकी मान्यता है कि नारी ही पुरूष की कठोर हड्डियों पर रक्त और माँस का आवरण चढ़ाती है। नारी ही पुरूष के हृदय में स्पन्दन पैदा करती है, नहीं तो वह मस्तिष्क के बवंडर में फँसकर समाप्त हो जाता।[4]

विष्णुजी नारी की आत्म–निर्भरता के समर्थक हैं। उनका मत है कि नारी की आत्म– निर्भरता ही पुरूष की सामन्ती मानसिकता की कलई खोल सकती है।[5] इसके साथ ही वे नारी की पूर्ण मुक्ति के पक्षधर हैं। कोई तो उपन्यास की वर्तिका इस दिशा में दृढ़ कदम उठाती है। उसके माध्यम से विष्णु जी कहते हैं – नारी मुक्ति का पूर्ण समर्थन करती हूँ, पर जो हूँ उसे छुपाना नहीं चाहती। समाज के जड़ नीति नियमों पर आघात करने के लिये यह आवश्यक है। बहुत हो चुकी, पुरूष की अनुकम्पा। हम अब 'हम' होकर जीना चाहती हैं।[6] इस 'हम' में ही नारी अस्तित्व की तलाश है। इस तलाश और मुक्ति की छटपटाहट का सशक्त दस्तावेज है उनका अंतिम उपन्यास अर्द्धनारीश्वर। यह उपन्यास मनोवैज्ञानिक अन्तर्द्वन्द्व को स्पर्श करता हुआ नारी विमर्श केन्द्रित सामाजिक उपन्यास है। इसमें नारी के यथार्थ को अभिव्यक्ति देते हुए विष्णुजी ने दो टूक बात कही है कि वास्तव में समाज नारी को मनुष्य नहीं 'जिंस' मानता है।[7] नारी की विडम्बना को वाणी देते हुए विष्णुजी ने रूढ़ियों की कलई खोली है। वे कहते हैं कि नारी का 'मैं' उसके जन्म के समय नाल के साथ काट दिया जाता है और नाभिनाल में आरोपित कर दिये जाते हैं जन्म–जन्म से धरोहर के रूप में सँजोये कुछ अदद आदमखोर संस्कार।[8]

विष्णुजी के मन में रूढ़िगत संस्कारों के प्रति तीव्र आक्रोश है। उनका मानना है कि नारी के पददलन में संस्कारों की भूमिका होने के साथ ही उसके साहस को भी युग–युग से चले आये संस्कार लील जाते हैं और उसे अर्थहीन कर देते हैं।[9] संस्कारों के प्रति यह आक्रोश एवं उससे मुक्ति की छटपटाहट इस उपन्यास का केन्द्रीय भाव है।

इस संदर्भ में विष्णुजी नारी मुक्ति की कोरी छटपटाहट ही अभिव्यक्त नहीं करते, वरन् नारी को संघर्ष की राह भी दिखाते हैं। उनके अनुसार नारी को अब अपने उद्धार के लिये किसी राम की प्रतीक्षा करने की जरूरत नहीं है।[10] नारी को अपनी शक्ति और अपनी क्षमता को पहचानना होगा। यदि उसमें चलने का संकल्प है, तो बाह्य शक्तियाँ उसे अजेय कर देंगी।[11]

नारी मुक्ति के संदर्भ में विष्णुजी की यह भी मान्यता है कि आर्थिक स्वतंत्राता अनिवार्य है पर वही अंत नहीं है। नारी को अर्थहीन संस्कारों से मुक्ति पानी होगी जो उसे दुर्बल और पंगु बनाती है।[12]

इस संदर्भ में विष्णुजी की एक नारी पात्र अपने शराबी पति के अत्याचार का पुरजोर विरोध करती है। उसके माध्यम से विष्णुजी ने नारी सशक्तीकरण का ठोस कदम उठवाया है 'हम बराबर खटे हैं। बराबर का कमावे हैं। हम पे नहीं चलेगी धौंस पट्टी हम ना सहते किसी की चौधराहट।'[13]

नारी विमर्श के संदर्भ में विष्णुजी का एक संदेश भी है 'शरीर का फूहड़ प्रदर्शन उतना ही हानिकारक है, जितना छुई–मुई गुड़िया बनना।'[14] विष्णुजी ने कथाकथित नारी – स्वातंत्र्य की पक्षधर उन स्त्रियों पर व्यंग्य भी किया है जो सेक्स इमेज को ही नारी स्वातंत्रय समझती हैं। विष्णुजी के अनुसार यह एक प्रकार की अकड़, तुनकमिजाजी और अहंकार है।[15] प्रसिद्ध लेखिका ममता कालिया ने भी इस संदर्भ में लिखा है – पिछले कुछ दशकों में स्त्री विमर्श एक अजीब शक्ल अख्तियार कर रहा है। तुम्हारी देह तुम्हारी अपनी है, तुम इसका जो चाहे इस्तेमाल करो – यह विमर्श स्त्री संघर्ष को देहवादी बना रहा है।[16]

विष्णुजी का मत है कि नारी तभी सशक्त हो सकती है, जब वह पुरूष के बल के पशुत्व के आकर्षण और उस पर निर्भरता की अनिवार्यता से मुक्त होगी।[17]

इस परिप्रेक्ष्य में यह कहना उचित होगा कि विष्णुजी विशुद्व भारतीय धरातल पर खड़े होकर नारी विमर्श करते हैं और नारी के यथार्थ एवं अन्तर्द्वन्द्व को अभिव्यक्त कर उसकी स्वतंत्राता व मुक्ति की आकांशा करते हैं। इस संदर्भ में उनकी मान्यता है कि पुराने, विधान, पुरानी स्मृतियाँ आज के संदर्भ में अर्थहीन हो रही है। अब नई स्मृतियों और नई संहिताओं की जरूरत है।[18]

उपन्यासों के साथ ही कहानियों में भी विष्णुजी द्वारा नारी की स्थिति, उसका मनोविज्ञान और उसकी मुक्ति का अंकन उनके नारी विमर्श को रेखांकित करता है। 'मैं नारी हूँ' कहानी नारी की शक्ति को व्यंजित करती है। विष्णुजी का मत है कि नारी का दृढ़ निश्चय न केवल पुरूष की अहंवादिता को करारा जवाब दे सकता है, वरन् अत्याचारी पुरूष को सबक भी सिखा सकता है। कहानी की नायिका रंजना अपने अस्तित्व के संघर्ष में अत्याचारी पति को करारा जवाब देती है कि जिस रंजना को आप खोजने आये हैं वह मर चुकी है। मैं नारी हूँ और नारी अब अपने आत्मसम्मान की रक्षा करना जानती है।[19]

'जिन्दगी एक रिहर्सल' और 'कैसी हो मरियम्मा' कहानियों में नारी व्यथा उसकी अदम्य जिजीविषा और संघर्ष की शक्ति का चित्राण है, तो 'एक आसमान के नीचे' कहानी में मारिया के माध्यम से नारी मुक्ति का संदेश है। इस कहानी में विष्णुजी ने प्रेमचंद युगीन अनमेल विवाह की समस्या के समाधान के साथ सही विवश जीने वाली नारी को मुक्ति की राह दिखाई है।

इसके अतिरिक्त चाची, दुराचारिणी, रजनी, आश्रिता, मारिया, वर्षगाँठ, मुहुर्त टल गया, हिमालय की बेटी आदि अनेक कहानियों में विष्णुजी ने नारी के मुक्ति और स्वतंत्रता की ओर बढ़ते कदम के साथ ही उसके हृदय की कोमलता, विषय विकार से परे सात्विकता, ममता और सच्चे व सरल प्रेम को अंकित किया है।

समग्रतः विष्णु प्रभाकर के कथा साहित्य में चित्रित नारी विमर्श के मूल में परम्परा और आधुनिकता का समन्वय है। वे जहाँ नारी के पृथक अस्तित्व को स्वीकार कर उसकी मुक्ति का समर्थन करके विशुद्ध आधुनिकतावादी चिन्तन प्रस्तुत करते हैं, वहीं नारी के अनुसूया रूप और पुरूष के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाली नारी की परम्परागत छवि वाली विचारधारा का पोषण भी करते हैं। आज जो स्थितियाँ हमारे सम्मुख बन रही है, उनमें इन दोनों दृष्टिकोणों का उचित सामंजस्य ही नारी जीवन को सही दशा व दिशा दे सकता है।

प्राध्यापक, हिन्दी

श्री सीताराम जाजू शास.कन्या स्नात.महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

संदर्भ :–

1. सम्मेलन पत्रिका भाग 95, संख्या 2 पृ. 121
2. सम्मेलन पत्रिका भाग 94, संख्या 4 पृ. 210
3. स्वप्नमयी – विष्णु प्रभाकर – वाणी प्रकाशन, दिल्ली 1988 पृ. 33
4. निशिकांत – विष्णु प्रभाकर – शब्दकार, दिल्ली 1986 पृ. 177
5. कोई तो – विष्णु प्रभाकर – शब्दकार, दिल्ली 1982 पृ. 287
6. वही पृ. 58
7. अर्द्धनारीश्वर– विष्णु प्रभाकर – शब्दकार, दिल्ली 1997 पृ. 60
8. वही पृ. 95
9. वही पृ. 352
10. वही पृ. 59
11. वही पृ. 17
12. वही पृ. 89
13. वही पृ. 104
14. वही पृ. 299
15. वही पृ. 354
16. हिन्दी अनुशीलन, जून 2004 पृ. 6
17. अर्द्धनारीश्वर – विष्णु प्रभाकर पृ. 67
18. वही पृ. 147
19. इक्यावन कहानियाँ – विष्णु प्रभाकर – अभिव्यंजना नई दिल्ली 1983 पृ. 412